ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.20, No.2, April-June, 2025/66

कोशल के प्रथम वैज्ञानिक ऋषभदेव

डी0 पी0 तिवारी, अनुष्का ओझा, योगेन्द्र प्रसाद त्रिपाठी

https://doi.org/ 10.61410/had.v20i2.242

भारत में प्राचीनकाल से पूजा, उपासना एवं दर्शन के क्षेत्र में दो धाराएं ब्राह्मण और श्रमण व्यवहार में रही हैं। श्रमण परम्परा में दो सम्प्रदाय मुख्य हैः जैन एवं बौद्ध। बौद्ध सम्प्रदाय के प्रवर्तक गौतम बुद्ध प्रायः छठी शताब्दी ईसा पूर्व के माने जाते हैं जबकि जैन सम्प्रदाय की प्राचीनता पूर्व वैदिक काल तक प्रतिष्ठापित करने के तर्क दिए जाते रहे हैं[1]। इस सम्प्रदाय के लोग सर्वोच्च धार्मिक व्यक्तित्व को तीर्थंकर की संज्ञा देते हैं। इस संज्ञा की व्याख्या में कहा जाता है कि जो संसार रूपी सागर से पार उतारने का मार्ग प्रशस्त करता है, उस अर्हत् अथवा उपदेष्टा को तीर्थंकर कहते हैं। तीर्थ शब्द का अर्थ नदी का घाट भी होता है अर्थात् संसार रूपी नदी को पार करने के लिए जो उपदेष्टा ज्ञानमार्ग रूपी घाट या सेतु का काम करे वह तीर्थंकर कहलाता है। तरति संसार महार्णवं येन निमित्तेन तत्तीर्थमिति। इस सम्प्रदाय में अब तक हुए 24 तीर्थंकरों की मान्यता है। इनका सामान्य परिचय इस सारणी से जाना जा सकता है।

क्रम सं0	**नाम**	**जन्म स्थान**	**चिन्ह**	**अनुचर**	**यक्ष एवं यक्षिणी**
1.	ऋषभदेव या आदिनाथ	विनीता/साकेत/अयोध्या	वृषभ	गोमुख	चक्रेश्वरी
2.	अजितनाथ	अयोध्या	गज	महायक्ष	रोहिणी या अजिबला
3.	संभवनाथ	श्रावस्ती	अश्व	त्रिमुख	प्रज्ञप्ति या दुरितरि
4.	अभिनन्दननाथ	अयोध्या	बानर	यक्षेश्वर या यक्ष नायक	वृजश्रृंखला या कालिका
5.	सुमतिनाथ	अयोध्या	यक्रवाक	तुम्बुरु	पुरुदत्ता
6.	पद्मप्रभु	कौशाम्बी	कमलपुरुष	कुसुम	मनोवेगा या मनोगुप्ता
7.	सुपार्श्वनाथ	वाराणसी	स्वस्तिक	नद्यावर्त	काली, शान्ता
8.	चन्द्रप्रभु	चन्द्रपुरी	धर्मचक्र	विजया या श्यामा	ज्वालामानिनी या भृकुटि
9.	सुविधिनाथ	काकदी	मकर	अजित	महाकाली या सुतारका
10.	शीतलनाथ	भद्रपुर	कल्पवृक्ष या श्रीवत्स	वृक्ष या ब्रह्मेश्वर	मानवी या अशोक
11.	श्रेयांसनाथ	सिंहपुर	गैंडा	ईश्वर	गौरी या मानवी
12.	वासुपूज्य	चम्पापुरी	भैंसा	कुमार	गांधारी या चण्डी
13.	विमलनाथ	काम्पिल्य	सूकर	षण्मुख	वैराटी या विदिता
14.	अनन्तनाथ	अयोध्या	रोही	पाताल	अनन्तमती या अंकुशा
15.	धर्मनाथ	रत्नपुरी	वज्र	किन्नर	मानसी या कंदपा
16.	शान्तिनाथ	हस्तिनापुर	हरिण	किंपुरुष या गरुड़	महामानसी या निर्वाणी

- **कुलपति, जय मीनेश आदिवासी विश्वविद्यालय, रानपुर, कोटा, राजस्थान**
- **सहायक आचार्य, श्री कल्लाजी वैदिक विश्वविद्यालय, निम्बाहेड़ा, राजस्थान**
- **आचार्य (अवकाश प्राप्त), समाजशास्त्र, का0सु0 साकेत महाविद्यालय, अयोध्या**

17.	कुन्थुनाथ	हस्तिनापुर	बकरा	गंधर्व	विजया या बला
18.	अरनाथ	हस्तिनापुर	तगरपुण्य मत्स्य	महेन्द्र या यक्षेन्द्र	अजित या बला
19.	मल्लिनाथ	मिथिला	कलश	कुबेर	अपराजिता या धरणप्रिया
20.	मुनिसुव्रत	राजगृह	कच्छप	वरुण	बहुरूपिणी या नरदत्ता
21.	नमिनाथ	मिथिला	नीलकमल भृकुटि	वरुण	चमुण्डी या गान्धारी
22.	नेमिनाथ / अरिष्टनेमि	सौरियापुर	शंख	सर्वातृ या गोमेद	कुष्माण्डिनी अंबिका
23.	पार्श्वनाथ	वाराणसी	सर्प	धरणेन्द्र	पद्मावती
24.	वर्धमान महावीर	कुण्डग्राम	सिंह	मातंग	सिद्धायिका

तालिका–1, तीर्थंकर, उनका जन्मस्थान, चिन्ह, अनुचर, यक्ष एवं यक्षिणी

जैन संप्रदाय में 24 तीर्थंकरों के अतिरिक्त बारह चक्रवर्ती–भरत, सगर, मघवा, सनतकुमार, शान्ति, कुन्थु, अरह, सुभौम, पद्म, हरिषेण, जयसेन, ब्रह्मदत्त; नौ बलभद्र अचल, विजय, भद्र, सुप्रभ, सुदर्शन, आनन्द, नन्दन, पद्म, बलभद्र; नौ वासुदेव–त्रिपृष्ठ, द्विपृष्ठ, स्वयम्भू, पुरुषोत्तम, पुरुषसिंह, पुरुषपुण्डरीक, दत्त, नारायण और कृष्ण; नौ प्रतिवासुदेवों– अश्वग्रीव, तारक, मेरक, मधु, निशुम्भ, बलि, प्रहरण, रावण, जरासन्ध की मान्यता है जिन्हें समवेत रूप से 63 शलाकापुरुष माना जाता है।

इनमें ऋषभदेव जिन्हें आदिनाथ कहा जाता है इस पंथ के प्रथम तीर्थंकर के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त हैं। इन्हें आदीश्वर अथवा आदेश्वर भी कहा जाता है। गो शब्द का अर्थ स्वर्ग होता है और उत्तम स्वर्ग को गोतम कहते हैं। चूँकि ऋषभदेव उत्तम स्वर्ग से अवतरित हुए थे इसलिए उन्हें गौतम तथा काश्य या तेज का रक्षक होने कारण काश्यप कहते हैं। प्रजा की जीविका के उपायों का मनन करने के कारण उन्हें मनु और कुलधर भी कहा गया है। आदिपुराण में इनके अन्य 1000 नामों का उल्लेख है[2]।

ऋषभदेव के विषय में प्रामाणिक सूचनाएं आचार्य जिनसेन कृत महापुराण संवत 765 = 837 ई0, आदिपुराण, श्रीमद् भागवत् महापुराण, शिव पुराण, गरुड़ पुराण, अग्नि पुराण, विष्णु पुराण, हरिवंश पुराण, पद्म पुराण, अपराजितपृच्छा, रूपमंडन, देवता मूर्ति–प्रकरण, समवायांग सूत्र, भद्रबाहु द्वितीय द्वारा रचित आवश्यक–निर्युक्ति गाथा, जिन भद्रगणी क्षमा–श्रमण द्वारा प्राकृत भाषा के लिखित विशेषावश्यक भाष्य, आवश्यक चूर्णि, संघदासगणी द्वारा महाराष्ट्री प्राकृत में चंपू शैली में लिखित वसुदेव हिन्डी, विमलसूरि रचित महाकाव्य पउमचरियं, तिलोयपण्णत्ति, आचार्य शीलांक द्वारा प्राकृत भाषा में लिखित ग्रंथ चउप्पन्नमहापुरिस चरियं, वर्धमानाचार्य द्वारा विरचित आदिनाहचरियं, भुवनतुंग सूरि विरचित ऋषभदेव चरियं, श्री हेमचन्द्राचार्य विरचित त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित के प्रथम पर्व सिरि उसहणाहचरियं, शुभशीलगणी द्वारा विरचित भरतेश्वर बाहुबली वृत्ति आदि ग्रन्थों से प्राप्त होती हैं।

आदिपुराण में विष्णु की भांति ऋषभदेव के 10 अवतारों का वर्णन किया गया है जो इस प्रकार हैं– 1 वृषभदेव, 2 सर्वार्थसिद्ध, 3 वज्रनाभि, 4 अच्युत, 5 सुविधि, 6 श्रीधर, 7 भोग, 8 वज्रजंघ, 9 ललितांग देव एवं 10. महाबल।

श्रीमद्भागवत पुराण में ऋषभदेव की वंशावली दी गई है जिसके अनुसार प्रियव्रत के पुत्र आग्नीध्र की पत्नी अप्सरा पूर्व चित्ति से नाभि, किंपुरुष, हरिवर्ष, इलावृत्त, रम्यक, हिरण्मय, कुरु,

भद्राश्व, और केतुमाल हुए जिनकी क्रमशः मरुदेवी, प्रतिरूपा, उग्रद्रंष्टी, लता, रम्या, श्यामा, नारी, भद्रा और देववीति नामक पत्नियां हुईं। इसी नाभि और मरुदेवी दम्पति से ऋषभदेव का जन्म हुआ[3]।

आदिपुराण में वर्णित है कि मरुदेवी ने सोते समय एक बार रात्रि के अंतिम प्रहर में सोलह प्रकार के स्वप्न देखे थे इनमें–इन्द्र का गरजता हुआ ऐरावत हाथी, मन्द गम्भीर शब्द करता हुआ शुक्ल वर्ण का वृषभ, चन्द्रमा के समान शुक्ल वर्ण का सिंह, कमलासीन दो हाथियों द्वारा अभिषेक की जाती हुई लक्ष्मी, भ्रमरों से आच्छादित दो पुष्प मालाएं, तारा मंडल के मध्य पूर्ण चन्द्र मण्डल, उदयाचल से उदित होता हुआ सूर्य, सुवर्ण के दो कलश, कुमुद एवं कमलों से शोभायमान तालाब, युगल मत्स्य, एक सुन्दर तालाब, क्षुभित हो तट का उल्लंघन करता हुआ समुद्र, सुवर्ण निर्मित ऊँचा सिंहासन, बहुमूल्य रत्नों से देदीप्यमान स्वर्ग का विमान, पृथ्वी का भेदन कर ऊपर आया हुआ नागेन्द्र भवन, रत्नों की राशि एवं जलती हुई प्रकाशमान धूम्र रहित अग्नि। इन स्वप्नों को देखने के पश्चात् उन्होंने देखा कि सुवर्ण के समान पीली कान्ति का धारक और ऊँचे कन्धों वाला एक ऊँचा वृषभ उनके मुख कमल में प्रवेश कर रहा है। मरुदेवी के पूँछने पर इन स्वप्नों का फल कहते हुए महाराज नाभिराज ने कहा, गज के देखने से उत्तम पुत्र होगा। उत्तम वृषभ देखने से वह समस्त लोक में ज्येष्ठ होगा, सिंह के देखने से अनन्त बल से युक्त होगा। मालाओं के देखने से धर्म के तीर्थ को चलाने वाला होगा। लक्ष्मी को देखने से सुमेरु पर्वत के मस्तक पर देवों के द्वारा अभिषेक को प्राप्त होगा, सूर्य को देखने से देदीप्यमान प्रभा का धारक होगा, दो कलश देखने से निधियों को प्राप्त करेगा, मछलियों का युगल देखने से सुखी होगा। सरोवर को देखने से अनेक लक्षणों से शोभायमान होगा। समुद्र को देखने से 'केवलिन्' होगा, सिंहासन को देखने से जगत् का गुरु होगा, देवों को देखने से स्वर्ग में अवतीर्ण होगा, नागेन्द्र का भवन देखने से अवधि ज्ञान रूपी लोचनों से युक्त होगा। चमकते रत्नों की राशि देखने से गुणों की खान होगा और निर्धूम अग्नि देखने से कर्म रूपी ईंधन को जलाने वाला होगा। इस प्रकार के स्वप्न देखने एवं स्वप्न फल की परम्परा वैदिक कथानकों एवं पौराणिक साक्ष्यों में भी मिलती है। आदिपुराण में लिखा है कि जिस प्रकार प्रातः काल के समय पूर्व दिशा कमलों को विकसित करने वाले प्रकाशमान सूर्य को प्राप्त होता है, उसी प्रकार मरुदेवी भी चैत्र कृष्ण नवमी के दिन सूर्योदय के समय उत्तराषाढ़ नक्षत्र और ब्रह्म महायोग में मति, श्रुति और अवधि इन तीन ज्ञानों से शोभायमान बालक होने पर भी गुणों से विवृत त्रिलोक के एक मात्र स्वामी देदीप्यमान पुत्र को प्राप्त किया। आदिपुराण के अन्य पाठान्तरों में इस बात का उल्लेख है कि अवसर्पिणी काल के तीसरे सुषम–दुःसम काल में जब चौरासी लाख पूर्व तीन वर्ष आठ माह और एक पक्ष अवशिष्ट रह गया था तब आषाढ़ कृष्ण द्वितीया के दिन उत्तराषाढ़ नक्षत्र में वज्रनाभि अहमिन्द्र, देवायु का अन्त होने पर ऋषभदेव सर्वार्थसिद्धि विमान से च्युत होकर मरुदेवी के गर्भ में अवतीर्ण हुए।

भागवत पुराण में उल्लेख है कि अपने पुत्र के सुन्दर सुडौल शरीर, विपुल कीर्ति, तेजबल, ऐश्वर्य, यश, पराक्रम और शूरवीरता आदि गुणों के कारण महाराज नाभि ने उनका नाम 'ऋषभ' यानि कि श्रेष्ठ रखा था[4]।

आज की मान्यता के अनुसार अयोध्या में जिस स्थान पर ऋषभदेव का जन्म हुआ था उसका समीकरण महाराजा इण्टर कालेज के समीप स्थित शाहजूरन टीले से किया जा सकता है (चित्र–1)।

चित्र–1, शाहजूरन टीला, अयोध्या

इस टीले पर एक मंदिर है जिसे ऋषभदेव मंदिर के नाम से जाना जाता है। इसमें ऋषभदेव की एक संगमरमर पर बनी मूर्ति स्थापित है (चित्र–2)। टीले के सर्वेक्षण से इसके ऊपरी धरातल से उत्तर कृष्ण मार्जित परम्परा, कृष्ण लेपित पात्र परम्परा, लाल रंग के पात्र एवं भूरे रंग के पात्र खण्ड अवशेष प्राप्त होते हैं। कुछ वर्षों पूर्व तक यह माना जाता रहा है कि उत्तर कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा का काल 800 ईसा पूर्व तक है। किन्तु वर्ष 2003 में डॉ0 बी0 आर0 मणी के निर्देशन में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग, नई दिल्ली की टीम द्वारा अयोध्या में किए गए उत्खननों से प्राप्त कोयले के नमूनों की रेडियो कार्बन तिथि 1100 ई0पूर्व से 1600 ई0पू0 तक प्राप्त हुई है[5] जिससे इस टीले पर इस सीमा तक की प्राचीन बस्ती के होने की संभावना व्यक्त की जा सकती है।

ऋषभदेव के पारिवारिक जीवन पर प्रकाश पुराणों से पड़ता है जिसके अनुसार उनकी दो पत्नियां थीं। यशस्वी और सुगन्धा। ऐसा उल्लेख है कि यशस्वी के सौ पुत्र थे जिनमें भरत सबसे ज्येष्ठ थे। भागवत् पुराण में इनकी पत्नी का नाम जयन्ती बताया गया है जो इन्द्र की पुत्री थी और उससे 100 पुत्र उत्पन्न हुए थे[6]। इनकी एक बहन ब्राह्मी थी जबकि दूसरी पत्नी सुगन्धा से एक पुत्र बाहुबली और एक पुत्री सुन्दरी उत्पन्न हुई थी।

चित्र–2, ऋषभदेव जन्मस्थान मंदिर, अयोध्या

जैन ग्रन्थों में अतीत की पारिस्थितिकी का विचित्र वर्णन मिलता है। इनमें चक्रात्मक युग काल गणना व्याख्यापित है। इस काल चक्र में मुख्य दो कालार्ध हैं जिन्हें उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी कहा जाता है[7]। इन दोनों के तीन–तीन चरण हैं जिन्हें मिलाने से छः युग चरणों का काल चक्र पूर्ण होता है। इनका निर्धारण और नामकरण सुख, समृद्धि, मानव जीवन की गुणवत्ता के आधार पर किया गया है। उत्सर्पिणी अर्धचक्र के तीन चरण 1. सुषमा–सुषमा युग जिसे भोग काल कहा गया है, इसमें मनुष्य की लम्बाई 6000 धनुष थी। इस युग में 10 प्रकार के कल्प वृक्ष थे जो मनुष्य की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे। यह सर्वाधिक सुख का काल था और इसमें सब कुछ उत्कृष्ट होता है। 2. सुषमा काल अपने पूर्ववर्ती काल की अपेक्षा कम सुखों वाला होता है जिसे मध्यम भोगभूमि कहा गया है। इसमें मनुष्यों की लम्बाई घट जाती है और कल्पवृक्षों की उत्पादक क्षमता में भी कमी आ जाती है। 3. तीसरे युग सुषमा–दुषमा को जघन्य भोग भूमि कहा गया है और इसमें पूर्व युग की अपेक्षा मनुष्य की लम्बाई और कल्पवृक्षों की उत्पादक क्षमता और कम हो जाती है। परिणामतः सुख और दुःख बराबर की मात्रा में व्याप्त हो जाते हैं। अगले अवसर्पिणी अर्धचक्र के प्रथम चरण दुषमा–सुषमा युग में दुःख की मात्रा अधिक और सुख की मात्रा कम हो जाती है। दूसरे चरण दुषमा काल में दुःख की मात्रा और बढ़ जाती है तथा तीसरे चरण दुषमा–दुषमा काल में मानव जीवन में गुणवत्ता में अत्यधिक ह्रास होने के कारण दुःख की मात्रा अपने चरम पर पंहुच जाती है और लोगों में त्राहि माम की स्थिति बनती है जिसके बाद समय चक्र का परिवर्तन होता है। वर्तमान में हम इसी काल चरण में जी रहे हैं।

ऋषभदेव के समय तक जलवायु परिवर्तन और मनुष्य के सात्विक प्रवृत्ति में गिरावट के कारण कल्पवृक्षों की उत्पादक क्षमता समाप्त हो गई थी और जंगली अनाजों की उपज उनकी क्षुधा पूर्ति हेतु अपर्याप्त सिद्ध होने लगी थी जिससे प्रजा में जीवन का संकट उत्पन्न हो गया था[8]। आदिपुराण के अनुसार इस विकट परिस्थिति में प्रजा एकत्र होकर ऋषभदेव के पास गई और जीविका का विकल्प बताने के लिए उनसे अनुरोध करने लगी। इस मुश्किल परिस्थिति में ऋषभदेव ने उन्हें असि (तलवार

चलाना या युद्ध कला), मसि (लेखन कला), कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प की शिक्षा दी[9]। अर्थात् ऋषभदेव इन 6 कलाओं के प्रथम उपदेष्टा या आविष्कारक थे जिनका इनके पूर्व किसी को ज्ञान नहीं था। इसी कारण वे कुलकर या इन क्षेत्रों के मनु माने गए[10]। यही नहीं ऋषभदेव को गन्ने की लता से रस निकालने की तकनीक बताने का भी श्रेय दिया जाता है। इसी कारण उन्हें प्रथम इक्ष्वाकु का संबोधन प्राप्त हुआ था[11]। आर्थिक क्षेत्र के अतिरिक्त उन्हें सामाजिक क्षेत्र में नई–नई व्यवस्थाएं बनाने का श्रेय दिया जाता है। पारिवारिक स्तर पर उन्होंने विवाह सम्बन्धी नियम बनाए और समाज में क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र तीन वर्णों की वर्ण व्यवस्था स्थापित कर उसे सुव्यवस्थित किया[12]। चौथे वर्ण ब्राह्मण की व्यवस्था उनके पुत्र भरत ने किया। जैन संप्रदाय का विश्वास है कि ऋषभदेव के काल तक दण्ड व्यवस्था 'हा' और 'मा' तक सीमित थी किन्तु मनुष्यों में प्रबल दोषों के आने के कारण कालान्तर में ऋषभदेव के पुत्र भरत ने शारीरिक दण्डों की व्यवस्था की[13]। एक शिक्षक की भॉति उन्होंने अपनी पुत्रियों और पुत्रों को गुण और योग्यता के अनुरूप नाना प्रकार की विद्याओं की देशना दी। इसी क्रम में उन्होंने अपनी पुत्री ब्राह्मी को लिपिशास्त्र एवं सुन्दरी को गणित की शिक्षा दी[14]। अपने पुत्रों भरत और बाहुबली को उन्होंने प्रशासन में सहायक विद्या और नीतियों की शिक्षा दी जिसके कारण उन्हें जगद्गुरु की संज्ञा प्रदान की गई[15]। ऐसा उल्लेख है कि उन्होंने आग का आविष्कार किया और पुरुषों के लिए 72 तथा स्त्रियों के लिए 64 विद्याओं की देशना दी थी[16]। इन विवरणों से यह प्रमाणित होता है कि ऋषभदेव अपने समय के एक महान वैज्ञानिक थे जिन्होंने समाज की आवश्यकता के अनुसार विविध क्षेत्रों में क्रान्तिकारी जीवनोपयोगी विधाओं एवं नीतियों की खोज कर जीवन को सुगम बनाने का प्रयत्न किया था।

इसी परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यक हो जाता है कि ऋषभदेव के काल का निर्धारण करने का प्रयत्न किया जाय। सिन्धु घाटी की सभ्यता के पुरास्थलों से कुछ मुहरें, उन पर अंकित प्रतीक चिन्ह, वृषभ की आकृति एवं नग्न मूर्तियॉ प्राप्त हुई हैं (चित्रः 3–4) जिसमें मोहनजोदड़ो से प्राप्त पशुपति शिव की मुहर विशेष महत्व की है। कुछ जैनाचार्य यह मानते हैं कि यह अंकन पशुपति शिव का न होकर ऋषभदेव का है। इस तर्क के आधार पर ऋषभदेव की तिथि विकसित हड़प्पा काल तृतीय सहस्राब्दी ईसा पूर्व मानते हैं[17]।

चत्र–3, मोहनजोदड़ो से प्राप्त मुहर

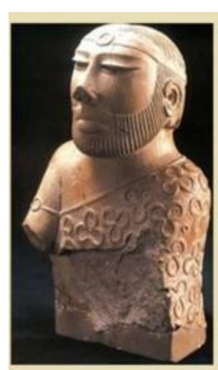

चित्र–4, मोहनजोदड़ो से प्राप्त मूर्ति

साहित्यिक साक्ष्यों के आलोक में यदि देखा जाय तो अयोध्या के स्थापना का श्रेय मनु को दिया जाता है[18]। इसके उजड़ने के बाद क्रमशः ऋषभ, कुश और विक्रमादित्य ने इसे समय≤ पर बसाया था। इक्ष्वाकु वंशीय राजाओं की जो वंशावली पुराणों में दी गई है उनमें मनु को उनका आदि पुरुष बताया गया है। मनु के पश्चात चौथी पीढ़ी[19] अथवा छठी पीढ़ी[20] में ऋषभ, 65वीं पीढ़ी में श्रीराम और इसी वंश में राम के बाद 9वीं पीढ़ी में बृहद्बल हुए जिन्होंने महाभारत युद्ध में भाग लिया था। आगे इसी वंश में बृहद्बल के बाद 22वीं पीढ़ी में प्रसेनजित हुए जिनकी ऐतिहासिकता और समय दोनों ज्ञात है। प्रसेनजित का समय 483 ईसा पूर्व माना जाता है। यदि एक पीढ़ी का समय औसतन 20 वर्ष मान लिया जाय तो बृहद्बल का समय 483+(20X22)=932 ईसा पूर्व हो सकता है। इसी प्रकार श्रीराम का समय 932+(9X20)=1112 ईसा पूर्व अनुमानित किया जा सकता है। जबकि मनु को 1112+(65X20)=2422 ईसा पूर्व में माना जा सकता है और यही तिथि अयोध्या की प्रथम बार स्थापना की मानी जा सकती है।

आजकल कम्प्यूटर की सहायता से प्लेनेटोरियम सॉफ्टवेयर से अतीत की ग्रहीय स्थित का पुनर्निर्माण कर काल गणना की जा रही है (चित्रः 5–6)। इसी तरह का प्रयास श्रीराम की जन्म तिथि ज्ञात करने में भी हुआ है। वाल्मीकि रामायण में श्रीराम के जन्म के समय का उल्लेख इस प्रकार किया गया हैः

ततो यज्ञे समाप्ते तु ऋतूनां षट्समत्ययुः।
ततश्च द्वादसे मासे चैत्रे नावमिके तिथौ।।
नक्षत्रेऽदितिदैवत्ये स्वोच्च संस्थेषु पंचसु।
ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पताविन्दुना सह।।
प्रोद्यमाने जगन्नाथं सर्वलोक नमस्कृतं।
कौसल्या जनयद् रामं दिव्यलक्षणसंयुतम्।।
वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड, 18/8–10

अर्थात् यज्ञ समाप्ति के पश्चात् जब छः ऋतुएं बीत गईं, तब बारहवें मास में चैत्र के शुक्लपक्ष की नवमी तिथि को पुनर्वसु नक्षत्र एवं कर्क लग्न में कौसल्या ने दिव्य लक्षणों से युक्त, सर्वलोक वंदित श्रीराम को जन्म दिया। उस समय (सूर्य, मंगल, शनि, गुरु और शुक्र ये) पांचो ग्रह अपने–अपने उच्च स्थान में विद्यमान थे तथा लग्न में चन्द्रमा के साथ बृहस्पति विराजमान थे। कम्प्यूटर की सहायता से इन नक्षत्रों की पुनर्स्थापना कर वैसी ही युति निर्मित करने से ज्ञात हुआ कि खगोल में नक्षत्रों की यह स्थिति अतीत में 10 जनवरी 5114 ईसा पूर्व में बनी थी जिसके आधार पर श्रीराम की यह जन्म तिथि प्रस्तावित है[21]।

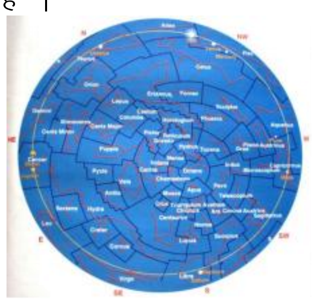

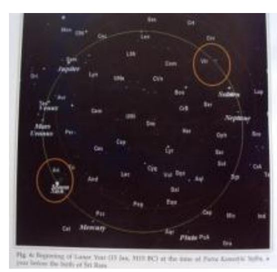

(चित्र संख्या–5–6, सरोजबाला एवं कुलभूषण मिश्रा, हिस्टॉरिसिटी ऑफ वैदिक एण्ड रामायण एराज से साभार)

इस आधार पर यदि मनु के समय का आकलन किया जाय तो 5114+(20x65)=6414 ईसा पूर्व की तिथि प्राप्त होती है। इसी के आस–पास अनुमानतः छठी–सातवीं सहस्राब्दी ऋषभदेव का समय सुनिश्चित किया जा सकता है। छठी–सातवीं सहस्राब्दी में खेती के द्वारा अनाज उत्पन्न करने का एक पुरातात्विक प्रमाण लहुरादेवा, जनपद सन्त कबीरनगर से प्राप्त है। इसी तरह के साक्ष्य झूसी जनपद प्रयागराज और कोलडिहवा से भी प्राप्त हैं। इन पुरास्थलों की रेडियो कार्बन/ए.एम.एस. तिथियां सारणी–2 में दी जा रही हैं।

पुरास्थल का नाम	रेडियो कार्बन/ए.एम.एस तिथियां
झूसी	BS 2526: Cal: 7477 BCE BS 2525: Cal: 6196 BCE BS 2524: Cal: 5837 BCE
कोलडिहवा (नवपाषाणकाल)	PRL 101: 4530±185 BCE PRL 100: 5440±240 BCE PRL 224: 6570±210 BCE
लहुरादेवा (पीरियड प्रथम ए)	BS 2145: Cal: 3090(2916)2879 BCE BS2148: Cal: 3363 (3328,3323,3174,3159,3119,3106,3105,) 3020 BCE BS 2151: Cal: 3654 (3635,3553, 3542) 3382 BCE BS 1951: Cal: 4220, 4196, 4161 BCE BS 1966: 6290±160BP Cal: 5298 BCE ERL 6442: (AMS) Cal: 6442-6376 BCE PRL 3030: 9230± 100 BP, Cal: 8317-8555 (8436) BCE PRL 3031: 9290± 120 BP, Cal: 8340-8696 (8518) BCE PRL 3032: 9590±110 BP, Cal: 88813-9171 (8992) BCE
लहुरादेवा (पीरियड प्रथम बी)	BS 1950: Cal: 2135(2078)2056BCE BS 2274: Cal: 2919(2700)2570 BCE ERL 6903: (AMS) Cal: 2345(2273)2200 BCE
टोंकवा (मिर्जापुर)	BS 2417: 6591 BCE, BS 2369: 5976 BCE, BS 2464: 4797 BCE, AMS Date 7th m. BC
गुफकराल (पीरियड प्रथम बी)	3470±110BP; 3130±120BP; 3980±120BP; IAR1982-83 P147 Sharma has suggested this time bracket: Calibrated/ Uncalibrated Period IA Cal 2787-2350 BCE 2420-2000 BCE Period IB Cal 2347-2000 BCE 2000-1700 BCE Period IC cal 2000-1850 BCE 1700-1550 BCE
कुन्झुन	3530-3335 BCE
बुर्जहोम (पीरियड प्रथम, नवपाषाणकाल)	c 2300 BCE

गोलबाई सासन	PRL 1646: 2710±90 BP (Layer 18, Period I Neo), Ar. 2300-2100 BCE PRL 1637: 4110±100BC (Layer 13, Period IIA)
महगड़ा	2265 BCE and 1616 BCE
चिरान्द (नवपाषाण काल)	C 2000 -1300 BCE
सोहगौरा	PRL 178: 1490±110BCE; PRL 179: 1410±130BCE

तालिका–2 नव पाषाण कालीन पुरास्थलों से प्राप्त रेडियोकार्बन एवं ए.एम.एस. तिथियां

पुरातात्विक प्रमाणों के आधार पर अब यह धारणा बनने लगी है कि कृषि जन्य उपजें भारत में छठी–सातवीं सहस्राब्दी में उत्पादित की जाने लगी थीं। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि सारे पुरास्थल, जहां से कृषि जन्य अनाज के दानों की प्राचीनतम तिथियां मिल रही हैं वे अयोध्या के आस–पास उत्तर प्रदेश में हैं। अस्तु इस विधा के प्रदर्शक एवं कोशल के प्रथम वैज्ञानिक के रूप में ऋषभदेव को स्वीकार करने में आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

संदर्भः

1. Jambuvijay Muni, Piotra Balcerowicz and Merek Mejor (Ed.) Essays in Jain Philosophy and Religion, Motilal Banarsidass, New Delhi, 2002, P 114; Pande Govid Chandra, Studies in The Origin of Buddhis, Motilal Banarsidass, New Delhi, 1957, P 353.
2. आदिपुराण, अध्याय 25
3. भागवत पुराण 5/3/13–18

   किचायं राजर्षिरपत्यकामः प्रजां भवाद्दृषीमासासान ईश्वरमाशिषां स्वर्गापवर्गयोरपि भवन्तमुपधावति प्रजायामर्थप्रत्यदोधनदमिवाधनः फलीकरणम्।......तत आग्नीध्रीयेंऽशकलयावतरिष्यामि आत्मतुल्यमनुपलभमानः।।

4. श्रीमद्भागवत् पुराण, 5/4/2 तस्य ह वा इत्थं वर्ष्मणा वरीयसाबृहच्छलोकेन चौजसा बलेन श्रिया यशसा वीर्य–शौर्याभ्यां च पिता ऋषभ इतीदं नाम चकार।
5. लाल बी0 बी0, राम हिज हिस्टॉरिसिटी मंदिर एण्ड सेतु, 2008, आर्यन बुक्स, नई दिल्ली, आई.एस.बी.एन. 978–81–7305–451–345–0.
6. श्रीमद्भागवत् पुराण, गीता प्रेस, 5/4/8
7. आर्यभटीय, अध्याय–3, श्लोक–9 'उत्सर्पिणी युगार्धं पश्चादवसर्पिणी युगार्धं च।'
8. आदिपुराण, 16/136–138

   वांछन्त्यो जीविकां देव त्वां वयं शरणं श्रिताः । तन्नस्रायस्य लोकेश तदुपाय प्रदर्शनात् ।।
   विभे समूलमुत्सन्ना पितृकल्पा महाड्रिध्रपाः। फलन्त्यकृष्टपच्यानि सस्यान्यपि च नाधुना ।।
   क्षुत्पिपासादिबाधाश्च दुन्वन्त्यस्मान्समुथिताः। न क्षमाः क्षणमप्येकं प्राणितुं प्रोक्षिताशनाः ।।
9. आदिपुराण 3/213

   अषिर्मषिः कृषिर्विद्या वाणिज्यं शिल्पमेव च। कर्माणी मानिषोढ़स्युः प्रजा जीवनहेतवः।।

तत्र वृत्तिं प्रजानां स भगवान् मति कौशलात्। उपादिसत् सरागो हि स तदासीज्जगदगुरुः।। और भी
आदिपुराण 16/181–82
तत्रासि कर्म सेवायां मषिर्लिपिविधौ स्मृता।
कृषिर्भूकर्षणे प्रोक्ता विद्याशस्त्रोपजीवने।।
वाणिज्यं वणिजां कर्म शिल्पं स्यात् करकौशलम्।
तच्च चित्रकलापत्रच्छेदादि बहुधा स्मृतम्।। और भी
आदिपुराण 16/249
कृष्यादिकर्मषटकं च स्रष्टा प्रागेव सृष्टवान् ।
कर्मभूमिरियं तस्मात् तदासीत्तद्व्यवस्थया।। और भी
महापुराण पर्व 16, 179–180
अषिर्मषिः कृषिर्विद्या वाणिज्यं शिल्पमेव च।
कर्माणी मानिषोढ़स्युः प्रजा जीवनहेतवः।।
तत्र वृत्तिं प्रजानां स भगवान् मति कौशलात्।
उपादिसत् सरागो हि स तदासीज्जगदगुरुः।।

10. आदिपुराण, 3/2/3 वृषभस्तीर्थकृच्चैव कुलकृच्चैव संमतः। भरतश्चक्रधृच्चैव कुलधृच्चैव वर्णितः ।।

11. आदिपुराण 16/264
आकानाच्च तदेक्षूणां रससंग्रहणे नृणाम् ।
इक्ष्वाकुरित्यभूद् देवो जगतामभिसंमतः ।।
आदि पुराण 35/67
ऐक्ष्वाकः प्रथमो राज्ञां भरतो भवदग्रजः ।
परिक्रान्तामतीकृत्स्ना येन नाम यताऽमरान् ।।

12. महाभारत 12/64/20
क्षात्रो धर्मो ह्रदादिदेवात् प्रवृत्तः। पश्चादन्ये शेष भूतास्यधर्मः ।।
आदिपुराण 38/5
कृतकृत्यस्यतस्यान्तश्चिन्तेयमुदपद्यत्। परार्थे संपदास्माकीसोपयोगा कथं भवेत्।।
आदिपुराण 41/30
मया सृष्टा द्विजन्मानः श्रावकाचारचुंचवः । त्वद्गीतोपासकाध्याय सूत्रमार्गानुगामिनः।।
आदिपुराण 41/46–54
साधु वत्स कृतं साधु धार्मिकं द्विज पूजनं । किन्तु दोषानुषगोऽत्र कोऽप्यस्ति स निशम्यताम् ।।
आयुष्मन् भवता सृष्टा य एते गृहमेधिनः । ते तावदुचिताचारा यावत्कृत युगस्थितिः।।
....
द्विजातिसर्जनं तस्मान्नाद्य यद्यपि दोषकृत । स्याद्दोषबीजमाययत्यां कुपाखण्ड प्रवर्तनात्।।

13. आदिपुराण, 16/104–108
तत्राद्यैः पज्यभिर्निणां कुलकृद्भिः कृतागसाम्। हाकार लक्षणो दण्डः समवस्थापितस्तदा ।।
हामाकारश्च दण्डोऽन्यैः पंचभिः संप्रवर्तितः । शरीरदण्डनं चैव वधवन्धादिलक्षणम् ।
नृणां प्रवलदोषाणां भरतेन नियोजितम् ।।

14. आदिपुराण 3/214–216

विभुः करद्वयेनाभ्यां लिखन्नक्षरमालिकाम्। उपादिशल्लिपिं संख्यास्थानं चांकैरनुक्रमात्।।
ततो भगवतो वक्त्रान्निः सृतामक्षरावलीम्। सिद्धं नाम इति व्यक्त मंगलांसिद्धमातृकाम्।।
अकारादिहकारान्ता शुद्धां मुक्तावलीमिव। स्वरव्यंजनभेदेन द्विधा भेदमुपेयुषीम्।।
आयोगवाहपर्यन्तां सर्वविद्यासु संतताम्। संयोगाक्षरसंभूतिं नैकबीजाक्षरैश्चिताम्।।
समवादीधरद् ब्राह्मी मेधाविन्यतिसुन्दरी। सुन्दरी गणितं स्थानक्रमैः सम्यग्धारयत्।।

15. आदिपुराण 16/18–19
पुत्राणां च यथाम्नायं विनया दान पूर्वकं। शास्त्राणि व्याजहारैवमानुपूर्व्या जगद्गुरुः।।
भरतायार्थ शास्त्रं च भरतं च ससंग्रहम्। अध्यायैरतिविस्तीर्णैः स्फुटीकृत्य जगौ गुरुः।।

16. Dalal Roshen, The Religions of India: A Concise Guide to Nine Major Faiths, Penguin Books, 2010, P 311.
17. Sangve Vilas, Adinath, Facets of Indology: Selected Research Papers on Jain Society, Religion and Culture, Popular Prakashan, Mumbai, 2001, P 24-25; Bilimoria Purushottam, Josheph Prabhu, Renuka M. Sharma (Editors), Indian Ethics: Classical Traditions and Contemporary Challenges, Vol.I, Ashgate Publishing ltd, 2007, Page 315.
18. वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड, श्लोक 5–6
कोशलो नाम मुदितःस्फीतो जनपदो महान् ।
निविष्टः सरयूतीरे प्रभूतधनधान्यवान्।।
अयोध्या नाम नगरी तत्रासील्लोकविश्रुता ।
मनुना मानवेन्द्रेण या पुरी निर्मिता स्वयम् ।।
19. श्रीमद्भागवत पुराण, प्रथम खण्ड, पांचवां स्कन्ध, अध्याय 1–4.
20. विष्णु पुराण, 1/2/27
21. Saroj Bala and Kulbhushan Mishra, Historicity of Vedic and Ramayan Eras: Scientific Evidences from the Depths of Oceans to the Heights of Skies, I-SERVE, New Delhi, 2012, Page 69.